Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

आदर्श कृषि योजना में परम्परागत स्रोतों की प्रासंगिकता

डॉ0 विमलेश मिश्र
असिस्टेण्ट प्रोफेसर
अर्थशास्त्र विभाग
कृषक (पी0जी0) कॉलेज, मवाना, मेरठ
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 3 Issue 3
Page Number : 133-138

Publication Issue :
May-June-2020

Article History
Accepted : 20 June 2020
Published : 30 June 2020

सारांश–वर्तमान समय में ऐसी कृषि पद्धति की आवश्यकता है जो हमारी पर्यावरण प्रणाली के अनुकूल हो जिससे हमारा पारिस्थितिकी सन्तुलन बना रहे। कृषि ऐसी होनी चाहिए जिसमें कम से कम पर्यावरणीय सन्तुलन बिगड़े। मानव स्वास्थ्य के अनुकूल एवं गुणवत्तापूर्ण हो। भारत में दीर्घकाल से परम्परा और अपने अनुभवों के आधार पर कृषक जैविक–कृषि व्यवहार में लाते रहे हैं। हरित क्रान्ति आरम्भ होने के बाद जैविक कृषि प्रणाली में लगातार कमी आई है। इस प्रणाली में एकल फसलों का प्रयोग बढ़ा। हरित क्रान्ति के आधारिक स्तम्भ रूप में उर्वरक एवं कीटनाशक प्रयुक्त होने लगे हैं। रासायनिक कीटनाशकों का 1960–61 में अत्यन्त कम प्रयोग होता था जो बदलकर अब लगभग 0.45 किग्रा प्रति हेक्टेयर हो गया। हरित क्रान्ति आरम्भ होने के समय कृषकों को रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग के लिए सहमत कराना पड़ता। अब कृषक और कृषि इनकी अभ्यस्त बन गई है। भारत यद्यपि रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के प्रयोग में कई देशों से पीछे है। तथापि कृषि उत्पादन के वृद्धि के सन्दर्भ में पृथक युक्ति की आवश्यकता हैं उपज वृद्धि, कीट नियंत्रण एवं सतत कृषि विकास के लिए जैविक कृषि की ओर अग्रसर होना आवश्यक है।

मुख्य शब्द – आदर्श, कृषि, योजना, परम्परागत, स्रोत, प्रासंगिकता।

प्रस्तावना–कृषि क्षेत्र में नई तकनीक के अन्तर्गत जैविक ऊर्जा तथा यांत्रिक ऊर्जा के बहुआयामी उपयोग के कारण आय वृद्धि तथा फसलोत्पादकता में वृद्धि के फलस्वरूप आज इन ऊर्जा स्रोतों के अन्तर्गत आदर्श कृषि योजना की आवश्यकता है। कृषि क्रियाएँ हमारे देश के लिए आधारभूत है। आदिकाल से ही हमारे देश में ऐसी कृषि प्रचलन में रही है जिसमें कि समस्त उपकरण और पोषक तत्व खेतों से ही प्राप्त किये जाते थे। इस कृषि प्रणाली को देशी कृषि प्रणाली कहा जाता रहा है। प्रकृति की क्रियाविधि से न्यूनतम हस्तक्षेप

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

के साथ भूमि को मातृवत सम्मान देते हुए कृतज्ञता के भाव के साथ कृषि की जाती रही है। इस प्राचीन पद्धति में फसल पैदा करने के लिए जैवकीय माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। इसमें रासायनिक उर्वरकों एवं रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग नहीं किया जाता था। फसलों की वृद्धि के लिए गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, नीम की खली, नीम की पत्ती, निमकौर, करंज, हरित शैवाल आदि का प्रयोग किया जाता था। इसी प्रकार फसलों को बीमारियों से बचाने के लिए करंज, मदार, नीम, धतूरा आदि का प्रयोग किया जाता था। इस कृषि प्रणाली से उत्पादित फसलें पर्यावरण को क्षति नहीं पहुँचाती, मानव एवं पशु–पक्षियों तथा मिट्टी के लिए स्वास्थ्यवर्धक होती तथा इससे सतही तथा भूमिगत जल का प्रदूषण नहीं होता था तथा मिट्टी की जीवन्तता बनी रहती थी। नव–पाषाण काल से फसल उत्पादन का कार्य आरम्भ हुआ तब से यही कृषि प्रणाली समाज की जरूरतें पूरी करती रही।

किन्तु तीव्र जनसंख्या वृद्धि से नगरीकाल और औद्योगिक काल को बढ़ावा दिया परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र कम होता गया तथा कृषि जोत का आकार सिमटता गया। बढ़ती खाद्यान्न आवश्यकता को पूरा करने के लिए यह आवश्यक हो गया कि कृषि उत्पादकता को बढ़ाया जाये। परिणामस्वरूप कृषि में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ने लगा। यह प्रवृत्ति बढ़ती रही। देश में 1965–66 में हरित क्रान्ति आरम्भ हुई जिसे बीज, सिंचाई एवं उर्वरक क्रान्ति भी कहा जाता है। वस्तुतः नार्मन बोरलाग द्वारा विकसित की गई गेहूँ की बौनी किस्म लरमा रोजो और अन्तर्राष्ट्रीय चावल शोध संस्थान, फिलीपीन्स से विकसित धान की बौनी किस्म टाइप चुंग नेटिव–1 और आई.आर.–8 से अधिक उर्वरक द्वारा ही अधिक उत्पादन किया जा सकता था और फिर इसी प्रकार की पम्परा चल पड़ी। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशक दवाओं का अविवेचनात्मक प्रयोग होने लगा। देश में रासायनिक उर्वरकों का 1960–61 में कुल प्रयोग 0.3 मिलियन टन था जो 2005–06 में प्रति हेक्टेयर लगभग 105.5 किग्रा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग हुआ था। जो वर्ष 2009–10 में बढ़कर 128.6 किग्रा हो गया है। अब रासायनिक उर्वरकों और जहरीले कीटनाशकों का भयानक जहर खेती की नियति बन गया है। मिट्टी की प्राकृतिक रूप से उर्वर बनाये रखने वाले अनेकों मिट कीट विलुप्त हो गये हैं। सघन कृषि में वीर–बहूटी, तितली और अनेकों रंग–बिरंगे जीव विलुप्त हो रहे हैं। गिद्धराज का अस्तित्व समाप्त प्रायः है। मछलियों की कई प्रजातियाँ समाप्त हो रही है। समग्र रूप से जैव विविधता का ह्रास हो रहा है। मिट्टी की जल अवशोषण क्षमता समाप्त हो रही है। इसलिए बार–बार सिंचाई करनी पड़ रही है। भूमि पर क्षारीयता बढ़ रही है। भूमि क्षरण की समस्या अत्यन्त भयावह हो रही है। फसल उत्पादन के प्रत्येक चरण के अतिरिक्त अब भण्डारण के स्तर पर भी जहरीले कटीनाशकों के प्रयोग किया जा रहा है। इस समय आम, केला, पपीता, चीकू, सेब, आलू बुखारा, अनार, अनानास आदि फलों को पकाने के लिए बहुतायत में कार्बाइड का प्रयोग किया जा रहा है। फल संरक्षण के लिए या अचार, मुरब्बा, सिरका, चटनी, शरबत आदि को अधिक समय तक सुरक्षित रखने के लिए जहरीले रसायनों और रंगों का प्रयोग किया जा रहा है। इनके कारण स्वास्थ्य पर अत्यन्त खराब प्रभाव पड़ रहा है।

रासायनिक कीटनाशकों और रासायनिक उर्वरकों के जहर से उपभोक्ता त्रस्त हैं और इनके प्रति दुनिया में विरोध के स्वर भी उठने लगे हैं। इससे मानव स्वास्थ्य पर अत्यन्त खराब तात्कालिक और दूरगामी प्रभाव पड़ रहा है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अंश फसल और दाने के माध्यम से मनुष्य के शरीर में पहुँच रहे हैं। जिससे अनेक बीमारियाँ बढ़ रही हैं। कई रासायनिक तत्व लम्बे समय तक मिट्टी में पड़े रहते हैं और क्रमशः जल स्रोतों को विषाक्त कर देते हैं अब तो भूमिगत जल स्रोत भी प्रदूषित होते जा रहे हैं। जो एक भयानक क्षति है। पश्चिम बंगाल के नदियाँ सहित कई जिलों के भूमिगत जल में संखिया

का संकेन्द्रण पाया गया है। इनके कारण नयी प्रकार की घात बीमारियाँ उत्पन्न हो रही हैं। यह प्रवृत्ति सार्वात्रिक है। इस कारण वर्तमान कृषि प्रणाली के प्रति विरोध भी सार्वत्रिक हैं। इसलिए जैविक कृषि प्रणाली की ओर लौटना आवश्यक हो गया है। अमेरिका और यूरोपीय देशों में जैविक कृषि प्रणाली से उत्पादित खाद्य पदार्थों की कीमतें अपेक्षाकृत अधिक होती हैं और लोग अधिक भुगतान करने को तत्पर भी हैं। प्रमुख विदेशी बाजारों में उन कृषि उत्पादों के लिए अब कोई स्थान नहीं है जिनमें हानिकारक रसायनों अथवा कीटनाशकों का प्रयोग किया गया है। विश्व व्यापार संगठन का स्वच्छता एवं पादप स्वच्छता प्रावधान हानिकारक रसायनों वाले तथा पौधों को क्षति पहुँचाने वाले तत्वों से युक्त पदार्थों के आयात का निषेध करता है। विश्व व्यापार संगठन की व्यवस्थानुसार कृषि उत्पादों के निर्यातकों को निर्यात की जाने वाली कृषि वस्तुओं के संदर्भ में उत्पाद के स्थान पर उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयाग इसी प्रकार होता रहेगा तो कृषि एवं सम्बद्ध वस्तुओं के निर्यातों की सम्भावना अत्यन्त क्षीण हो जायेगी।

अतः वर्तमान समय में ऐसी कृषि पद्धति की आवश्यकता है जो हमारी पर्यावरण प्रणाली के अनुकूल हो जिससे हमारा पारिस्थितिकी सन्तुलन बना रहे। कृषि ऐसी होनी चाहिए जिसमें कम से कम पर्यावरणीय सन्तुलन बिगड़े। मानव स्वास्थ्य के अनुकूल एवं गुणवत्तापूर्ण हो।

हमें जैविक कृषि प्रणाली व्यवहार में लानी चाहिए ताकि कृषि के समस्त उपकरण एवं पोषक तत्व खेती से ही प्राप्त किये जा सकें। इस कृषि प्रणाली को देशी कृषि प्रणाली भी कहा जाता है। इसमें प्रकृति की क्रियाविधि में न्यूनतम हस्तक्षेप के साथ भूमि की मातृवत सम्मान देते हुए कृतज्ञता के भाव के साथ कृषि की जाती है।

जैविकीय कृषि प्रणाली में फसल पैदा करने के लिए जैविकीय माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। जैविक प्रणाली में रासायनिक उर्वरक और रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग नहीं होता है। फसलों की वृद्धि के लिए गोबर का खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, नीम की खली, नीम की पत्ती, निमकौर (नीम का फल) करंज, हरित शैवाल आदि का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार फसलों को बीमारियों से बचाने के लिए करंज, मदार, नीम, धतुरा आदि का प्रयोग किया जाता है। इस कृषि प्रणाली से उत्पादित फसलें पर्यावरण को क्षति नहीं पहुँचाती, मानव एवं पशु–पक्षियों तथा मिट्टी के लिए स्वास्थ्यवर्धक होती हैं। इसमें सतही एवं भूमिगत जल का प्रदूषण नहीं होता तथा मिट्टी की जीवन्तता बनी रहती है। नव–पाषाण काल से फसल उत्पादन का कार्य आरम्भ हुआ तब से ही जैविक कृषि प्रणाली समाज की जरूरतें पूरी करती हैं। भूमि का उपयोग और पोषण साथ–साथ होता है।

फसल विविधता की दृष्टि से भारत अत्यन्त सम्पन्न राष्ट्र है। इसलिए कृषि निर्यातों के लिए भारत को नैसर्गिक सुविधा प्राप्त है। जैविक कृषि प्रणाली से उत्पादित खाद्य पदार्थों की माँग पूरे विश्व में बढ़ रही है। जैविकीय कृषि प्रणाली से उत्पादित खाद्य पदार्थों की कीमत अपेक्षाकृत अधिक होती है और लोग अधिक भुगतान करने को तत्पर भी हैं। भारत में अभी भी रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग अन्य देशों की तुलना में कम होता है। शुष्क कृषि क्षेत्रों, उत्तर–पूर्व के राज्यों और पर्वतीय राज्यों में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग अत्यन्त कम है। इसलिए भारत जैविकीय कृषि प्रणाली से उत्पादित खाद्य पदार्थों द्वारा घरेलू माँग पूरा कर सकत है और विश्व बाजार में भी अधिक अंश ले सकता है। जैविक खादें, फसल चक्र, मिश्रित कृषि, जैविक कीटनाशक, न्यूनतम जुताई, प्रकृति क्रियाविधि में न्यूनतम हस्तक्षेप आदि जैविक कृषि के प्रमुख आधार है।

यही कारण है कि हाल के वर्षों में जैविक कृषि प्रणाली की ओर पुनः ध्यान दिया जाने लगा है। भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् में 1986 में जैव प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना की गई। नवीं पंचवर्षीय योजना में जैविक कृषि के लिए प्रावधान किये गये थे। राष्ट्रीय कृषि नीति 2000 में फसल सघनता बढ़ाने के लिए बहु फसल और अंतर्फसल के विकास पर जोर दिया गया है, राष्ट्रीय कृषि नीति में जैविक कृषि के प्रसार और कृषि विकास में परम्परागत ज्ञान के उपयोग पर जोर दिया गया है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में जैविक कृषि के प्रोत्साहन हेतु 100 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में कहा गया है कि कम लागत पर जैव उर्वरकों का उत्पादन किया जाना चाहिए ताकि रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता घटाई जा सके। अब देश में कई संगठन जैव उर्वरक और जैविक कीटनाशकों का उत्पादन करने को अग्रसर हैं। इनमें नेफेड, इफ्को और कृभकों विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कई संगठन अब रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग किये बिना संविदा कृषि के आधार पर जैविक कृषि को प्रोत्साहित कर रहे हैं। दसवीं पंचवर्षीय योजना में जैविक कृषि को बढ़ावा देना तथा जैविक कृषि उत्पादों के लिए समुचित बाजार व्यवस्था करना है। पिछले पाँच दशकों में कृषि उत्पादन और उत्पादित वृद्धि के लिए उत्तरोत्तर वृद्धिमान दर से उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग किया गया। इस युक्ति को अचानक बदलने पर कृषि उत्पादन में कमी की सम्भावना है। देश के कृषि क्षेत्र पर बहुत बड़ा जनसंख्या के भरण–पोषण का भार है। कृषि सर्वथा स्त्रातजिक क्षेत्र है। कृषि क्षेत्र को प्रतिरक्षा के समतुल्य देखा जाना चाहिए। खाद्यान्नों की गम्भीर कमी की अवस्था में बहुधा अतिरेक वाले राष्ट्रों का भी व्यवहार तटस्थ हो जाता है। ब्रिटिश शासन काल में तो अकाल पड़ने पर लाखों लोगों की मृत्यु हो जाती थी। 1964–65 और 1965–66 में अनाज की गम्भीर कमी हो गई थी। पी.एल. 480 के अन्तर्गत अत्यन्त निम्न कोटि का अनाज आया था जो सामान्य देशों में उपयोग योग्य नहीं था। अतः अत्यन्त सावधानी रखते हुए कृषि प्रविधि परिवर्तन की आवश्यकता है।

कृषि में ज्वार, बाजरा, जौ, मक्का, कोदों, रागी, मसूर, सावाँ आदि परम्परागत फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र अत्यन्त कम हो गये हैं। अंग्रेजों के शासन काल में इन अति पौष्टिक अनाजों को मोटा अनाज कहकर उनका महत्व कम कर दिया गया और कुछ अनाजों को श्रेष्ठ अनाज कह दिया गया। इनका उत्पादन कम उर्वरक और कम कीटनाशकों द्वारा होता है। इनमें अधिक पोषक तत्व भी होता है। इन्हें अब 'मोटा' अनाज न कहकर 'अधिक' पौष्टिक अनाज कहना चाहिए। इसलिए गेहूँ और धान जो पानी, उर्वरक और कीटनाशकों का भारी उपभोग करते हैं के प्रति झुकाव कम करने की आवश्यकता है और अन्य परम्परागत फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र बढ़ाने की आवश्यकता है। सामान्य कृषि प्रणाली में क्रमशः रासायनिक तत्वों का प्रयोग कम करने और जैविक तत्वों का उपयोग बढ़ाने की आवश्यकता है। कृषि वैज्ञानिकों के समक्ष अत्यन्त बड़ी चुनौती है कि वे ऐसे बीजों का प्रचलन बढ़ायें कि कम उर्वरक और रासायनिक उर्वरकों के साथ उत्पादन बढ़ा सकें।

निष्कर्ष–

अतः ऊर्जा प्रयुक्त क्षेत्रों में वर्तमान एवं स्थगित ऊर्जा स्रोतों के अन्तर्गत एक आदर्श कृषि योजना के लिए कृषि में जैविक ऊर्जा संसाधन का प्रयोग आवश्यक हो गया है। ऊर्जा के जैविक संसाधनों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, हरी खाद, खली की खाद मुख्य हैं। उचित फसल चक्र अपना कर भी फसलों की उर्वरता बढ़ाई जा सकती है। वस्तुतः खाद शब्द का प्रयोग इन्हीं जैविक खाद के लिए किया जाता है। जैविक खादों के प्रयोग से कृषि को अधिक समर्थ बनाया जा सकता है। जैविक खादों के प्रयोग से फसल को सभी आवश्यक पोषक पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं। इनके प्रयोग से कृषि लागत भी कम हो जाती है।

फसलों के लिए पानी की आवश्यकता भी अपेक्षाकृत कम पड़ती है। साथ ही फसलों को रोगों से बचाने के लिए जैविक कीटनाशकों का ही प्रयोग किया जाये। जैविक कीटनाशकों का प्रभाव अधिक दूरगामी और पर्यावरण पोषक होता है। नीम सर्वप्रमुख जैविक कीटनाशी है। यह बहुगुणकारी पौधा है। इसके सभी भागों में कीटनाशक गुण पाये जाते हैं। नीम की पत्ती, नीम की खली सड़ा कर बनाई गई खाद, नीम का फूल सड़ाकर बनाया गया घोल आदि फसलों की बीमारी से बचाता है। इसके अतिरिक्त कनेर, धतुर, करंज, महुआ, शरीफा, गुलदाउदी आदि भी कीटनाशक गुण पाये जाते हैं। गो–मूत्र एक प्रभावी कीट नियंत्रक है। अब गो–मूत्र से कीटनाशक बनाये जा रहे हैं।

जैविक खादें और जैविक पदार्थ न केवल फसलों को पोषक तत्व प्रदान करते हैं। बल्कि इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि वे भूमि के भौतिक और जैविकीय गुणधर्म से स्थाई सुधार करते हैं। कृषि उत्पादन का सातत्य बने रहने के लिए जैविक खाद का प्रयोग बढ़ाया जाना आवश्यक है। जैविक पदार्थों के अभाव में रासायनिक उर्वरकों की उपादेयता अत्यन्त कम हो जाती है। रासायनिक उर्वरकों के कम प्रयोग से भी खाद मिट्टी वाली भूमियों पर खेती करके अच्छी फसल उगायी जा सकती है।

यद्यपि भारत में दीर्घकाल से परम्परा और अपने अनुभवों के आधार पर कृषक जैविक–कृषि व्यवहार में लाते रहे हैं। हरित क्रान्ति आरम्भ होने के बाद जैविक कृषि प्रणाली में लगातार कमी आई है। इस प्रणाली में एकल फसलों का प्रयोग बढ़ा। हरित क्रान्ति के आधारिक स्तम्भ रूप में उर्वरक एवं कीटनाशक प्रयुक्त होने लगे हैं। रासायनिक कीटनाशकों का 1960–61 में अत्यन्त कम प्रयोग होता था जो बदलकर अब लगभग 0.45 किग्रा प्रति हेक्टेयर हो गया। हरित क्रान्ति आरम्भ होने के समय कृषकों को रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग के लिए सहमत कराना पड़ता। अब कृषक और कृषि इनकी अभ्यस्त बन गई है। भारत यद्यपि रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के प्रयोग में कई देशों से पीछे है। तथापि कृषि उत्पादन के वृद्धि के सन्दर्भ में पृथक युक्ति की आवश्यकता हैं उपज वृद्धि, कीट नियंत्रण एवं सतत कृषि विकास के लिए जैविक कृषि की ओर अग्रसर होना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. इण्डिया, नेशनल बैंक फॉर एग्रीकल्चर एण्ड रूरल डेवलेपमेंट (1991), ''बायोगैस प्लान्ट्स इन नैनीताल एण्ड रामपुर डिस्ट्रिक्ट ऑफ उत्तरांचल–ऐन एक्सपोस्ट इवोल्यूशन स्ट्डी''।
2. धवन, के0सी0, मित्तल, जे0पी0 और अरोरा, बी0एस0 (1992). ''रोल ऑफ एनीमल ह्यूमन एनर्जी इन द विलेज इकोसिस्टम इन इण्डिया'', इकोनॉमिक्स, अफेयर्स, (कोलकाता) 37(1), 31–45
3. भाटिया, आर0सी0, बाबा, आर0एस0, इतिन्दर, सरकारिया, डी0एस0 (1992), एनर्जी यूस पैटर्न इन पंजाब एग्रीकल्चर, एग्रीकल्चरल सिचुएशन इन इण्डिया, 47, 9, 699–713
4. मिश्रा, टी0एन0, सिंह, एल0आर0, सिंह, विजेन्द्र, गुप्ता, ओ0पी0 (1983), ''रिसर्च रिपोर्ट ऑन एनर्जी रिक्वायरमेन्ट्स इन एग्रीकल्चरल सेक्टर डायरेक्टोरेट ऑफ एक्सपेरीमेन्ट्स स्टेशन। जी0बी0 पन्त यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड टेक्नोलॉजी, पन्तनगर, उत्तरांचल।

5. विलियम, जे0 स्टॉब (1974). ''लांग इन पासिबिलिटीज फार इनक्रीसिंग इन्कम्स एण्ड इम्प्लायमेंट इन द फार्म सेक्टर ऑफ डेवलपिंग कन्ट्रीज'', इण्डियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल इकोनॉमिक्स।
6. शर्मा, आर0के0 (1992). ''एनर्जी यूटिलाइजेशन इन सम मेजर क्राप्स– ए केस स्टडी इन द फार्म ऑफ बाजाली डेवलपमेंट ब्लाक ऑफ असम।'' एग्रीकल्चरल सिचुएशन इन इण्डिया, 46(10), 737–740
7. सिंह, आर0एस9, सिंह, आर0पी0, सिंह, जे0एन0 (1988), ''एनर्जी यूस पैटर्न ऑफ सिरिअल क्राप्स ऑन डिफरेन्ट साइज ऑफ फार्म इन देवरिया डिस्ट्रिक्ट ऑफ उत्तर प्रदेश। (कोलकाता) इकोनामिक अफेयर्स, 33(4), 249–256
8. सिंह, एल0आर0, सिंह, विजेन्द्र (1976), ''लेविल एण्ड पैटर्न ऑफ एनर्जी कंजम्शन इन एन एग्रीकल्चरडली एडवान्स एरिया ऑफ उत्तर प्रदेश'', इण्डियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल इकोनॉमिक्स। (Revised Edition-2009)
9. सिंह, गजेन्द्र एण्ड चान्सलट, डब्ल्यू0जे0 (1976). ''चेन्जेस इन एनर्जी यूस पैटर्न फ्राम 1976 टू 1974 ऑन द सलैक्टेड इन ए फार्मिंग डिस्ट्रिक्ट्स इन नार्दन इण्डिया''। मैकेनाइजेशन।